SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

पीटर पौल एक्का द्वारा रचित उपन्यास "जंगल के गीत" में आदिवासी जीवन संस्कृति

मनीला समद, शोधार्थी, हिंदी विभाग,
राँची विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
मनीला समद, शोधार्थी, हिंदी विभाग,
राँची विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 22/03/2022
Revised on : -----
Accepted on : 29/03/2022
Plagiarism : 01% on 22/03/2022

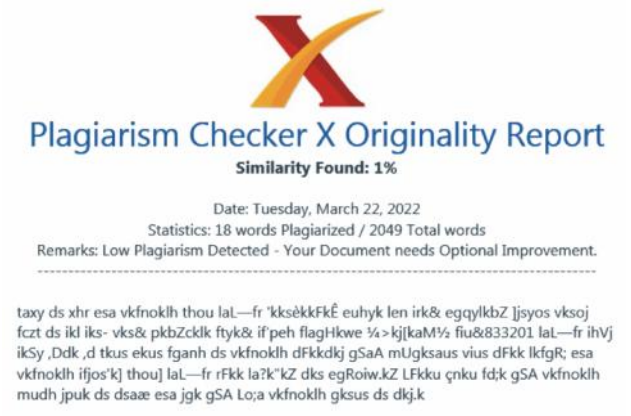
Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 1%

Date: Tuesday, March 22, 2022
Statistics: 18 words Plagiarized / 2049 Total words
Remarks: Low Plagiarism Detected - Your Document needs Optional Improvement.

taxy ds xhr esa vkfnoklh thou laL—fr 'kksèkkFkÊ euhyk len irk& egqylkbZ]jsyos vksoj fczt ds ikd iks- vks& pkbZcklk ftyk& if'peh flagHkwe ¼>kj[kaM½ fiu&833201 laL—fr ihVj ikSy ,Ddk ,d tkus ekus fganh ds vkfnoklh dFkkdkj gSaA mUgksaus vius dFkk lkfgR; esa vkfnoklh ifjos'k] thou] laL—fr rFkk la?k"kZ dks egRoiw.kZ LFkku çnku fd;k gSA vkfnoklh mudh jpuk ds dsaæ esa jgk gSA Lo;a vkfnoklh gksus ds dkj.k

शोध सार

पीटर पौल एक्का के उपन्यास 'जंगल के गीत' को आदिवासी जीवन संस्कृति का महत्वपूर्ण दस्तावेज कहा जा सकता है। 'जंगल के गीत' में आदिवासी जीवन संस्कृति के सूक्ष्म से सूक्ष्म पहलुओं का सहज उल्लेख मिलता है। 'जोहार' कहकर अभिवादन करना, पैर धोकर स्वागत करना, गोदना गुदवाना, बुझावल का खेल खेलना इत्यादि। आदिवासी जीवन वन तथा कृषि पर आधारित है इसलिए उसके पर्व त्योहार, उत्सव संस्कृति इन्हीं पर केंद्रित होते हैं। उपन्यास में धुमकुड़िया का महत्व, यौन स्वच्छंदता का खंडन, स्त्री और पुरुष द्वारा जीवन साथी चुनने की स्वतंत्रता आदि महत्वपूर्ण आदिवासी संस्कृति का उल्लेख मिलता है।

मुख्य शब्द

आदिवासी, आदिवासी संस्कृति, प्रकृति, वन, उत्सव, प्रकृति पर्व.

संस्कृति

पीटर पौल एक्का एक जाने माने हिंदी के आदिवासी कथाकार हैं। उन्होंने अपने कथा साहित्य में आदिवासी परिवेश, जीवन, संस्कृति तथा संघर्ष को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। आदिवासी उनकी रचना के केंद्र में रहा है। स्वयं आदिवासी होने के कारण उन्होंने आदिवासी समुदाय के जीवन को बहुत करीब से जाना तथा महसूस किया, जिसकी झलक हमें उनकी लेखनी में देखने को मिलती है।

'जंगल के गीत' उपन्यास 1999 मे प्रकाशित पीटर पौल एक्का का एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। यह उरांव आदिवासियों पर केंद्रित बिरसा मुंडा के उलगुलान के समय की कथावस्तु पर आधारित उपन्यास है। उपन्यास में आदिवासी जीवन संस्कृति के विभिन्न पहलुओं से पाठक रूबरू होता है। 'संभ्रांत वर्ग और मीडिया ने

आदिवासी समाज की एक नकली और मनोरंजक छवि बना दी है, जिसको टीवी पर या पत्र–पत्रिकाओं में देखकर नई पीढ़ी यही सोचती है कि यह आदिवासी तो बड़े रंगीन मिजाज हैं। हमेशा नाचते गाते रहते हैं । इनको ना कोई [1] ऐसी ही धारणाएं आदिवासियों के लिए तथाकथित सभ्य समाज ने बना कर रखी है।

आदिवासी समाज एक बंद समाज है। बंद समाज होने के कारण ही बाहरी जीवन जगत में इस समाज की संस्कृति, जीवन, जिजीविषा, भाषा, संघर्ष की पूर्णता जानकारी नहीं हो पाती। यह समाज प्रायः दूसरों के लिए अजूबा ही होता है। कही सुनाई बातों, टी वी, सिनेमा, काल्पनिक कथाओं, पौराणिक कथाओं के आधार पर मान लिया गया कि आदिवासी जंगली, बर्बर असभ्य होता है और उसकी संस्कृति नहीं होती। उसे मानेवतर प्राणी मान लिया गया। संभ्रांत समाज के लेखकों ने आदिवासी विषयक उपन्यासों की रचना की है, लेकिन उनमें भी तथाकथित सभ्य समाज के पूर्वाग्रह या कहें दृष्टिकोण का असर दिखता है।

उपन्यासकार संजीव लिखते हैंः 'आदिवासी लोगों की दो कमजोर नसे हैं– अरण्यमुखी और उत्सवधर्मिता! अरण्यमुखी संस्कृति उन्हें सभ्यता के विकास से जुड़ने नहीं देती और उत्साह धर्मिता उन्हें कंगाल बनाती रहती है।'[2] जिस अरण्यमुखी संस्कृति को उपन्यासकार संजीव आदिवासी समाज के दोष के रूप में देखते हैं, उसी अरण्यमुखी संस्कृति को पीटर पौल एक्का आदिवासी जीवन का महत्वपूर्ण अंग बताते हैं। आदिवासी प्रकृति की गोद में पला बढ़ा है इसलिए प्रकृति उसके जीवन के रग–रग मे रच बस गया है। जहां तक बात होती है उत्सव धर्मिता की तो आदिवासी समुदाय का अपना जीवन संघर्ष है फिर भी अपनी जिजीविषा के कारण ही उन्होंने अपने अस्तित्व को बनाए रखा है। उनका हर उत्सव प्रकृति से जुड़ा होता है और वे प्रकृति के सान्निध्य में खुशी मनाते हैं।

'जंगल के गीत' उपन्यास का आरंभ ही उत्सव ही तैयारी से होता है। उस पहाड़ी की तराई में बसे 'तुम्बा टोली' के लोगों के जिंदगी में एक नई सुबह आ गई थी। पूरे इलाके में आज बड़े त्योहार का दिन है तराई में बसे उस इलाके के उरांव खद्दी मनाने की तैयारी में है। हर कहीं उत्साह और उमंग है खिले –खिले चेहरे, हंसते–गाते बच्चे, हवा में धुली–धुली ताजगी, सखुए के डालियों से छिटकती एक जानी पहचानी सी ताजी–ताजी खुशबू युवक–युवतियों में एक अलग ही उत्साह का आलम।"[3] प्रकृति पर्व, वसंत उत्सव, सरहुल, बाहा परब, खद्दी विभिन्न नामों से जाना जाता है। इस त्यौहार में धरती में नए जीवन की शुरुआत होने की खुशी मनाई जाती है। सरहुल में साल के फूल के माध्यम से प्रकृति का स्वागत किया जाता है। आदिवासी जीवन में साल के पेड़ का काफी महत्व है। इसके बिना आदिवासी संस्कृति की बात ही नहीं जा सकती। वनस्पति शास्त्री शाल को 'शोरेया रोबुस्टा' के नाम से पुकारते हैं।"[4] इसके इर्द–गिर्द ही आदिवासी जीवन चक्र घूमता है। सरहुल के दिन पहान, पहानिन की शादी के रूप में सूर्य और धरती के प्रतीकात्मक विवाह की जाती है। उन्हें तेल, सिंदूर लगाकर पानी की छीटों से नहलाया जाता है। तब उपस्थित जनसमूह ने एक स्वर में कहा था – बरसो बरसो! 'महतो ने तब हाड़ियावाला घड़ा उठा लिया था और साल के दोनों से हड़िया उड़ेल कर पुरखों को स्मृति चढ़ाई थी, पुरखों के साथ उस अनदेखे रिश्ते का एहसास किया गया था।"[5]

पहान, पहानिन के प्रतीकात्मक विवाह के साथ ही अच्छी वर्षा होने तथा अच्छी फसल की कामना की जाती है। सरहुल पर्व से पहले नए फल, फूल तथा पत्तों का उपयोग नहीं किया जाता है। आदिवासी समुदाय अपने पुरखों को हर कार्य की शुरुआत, पर्व उत्सव में याद करते हैं। मान्यता के अनुसार मृत्यु के बाद पुरखे संरक्षक के रूप में घर पर ही रहते हैं। हंडिया का आदिवासी समाज में विशेष महत्व है, यह चावल से बना पेय होता है। हर अवसर पर इसकी उपस्थिति अनिवार्य है। साथ ही यह पुरखों को चढ़ावा के रूप में दिया जाता है, इसे प्रसाद के रूप में ग्रहण भी किया जाता है। भादो के महीने में करम पर्व आता है, इस उत्सव में करम पेड़ की डाल की पूजा होती है। 'इसके बाद पहान ने करम राजा को सिंदूर से अभीषिक्त किया उसके चारों और सफेद धागे को लपेटा, फिर घड़े मे से थोड़ा दूध उड़ेल कर अभिषेक की अंतिम विधि पूरी की।'[6] इसके बाद वहां करमा धरमा दो भाई की कथा सुनाते हैं। मांदर की थाप पर समूचा पहाड़ी परिवेश उत्साह से भर उठा। 'खेतों में रोपा की समाप्ति पर करम त्यौहार हर रोज मेहनत भरी जिंदगी में एक अलग ही उल्लास लेकर आया था। घर में चाहे खाने को कुछ ज्यादा ना हो

पर वह गीत गाएंगे जरूर आधा पेट में भी नाचेंगे। नाचना–गाना जैसे उनके जीवन का एक अभिन्न अंग सा हो गया था।[7] कठिन परिस्थितियों में भी आदिवासी अपनी जीवटता के कारण जिंदा रह पाता है। ''यहां का आदमी बाबाजी है। कल क्या खाएगा इसकी चिंता नहीं।"[8]

आदिवासी जीवन वनोपज और कृषि आधारित है। 'कादलेटा उत्सव' के साथ ही धान की रोपनी शुरू हो जाती है। पहान् ने पहले 'डंडा कटा' की विधि पूरी की। सब तन्मयता से पूजा के विधि देख रहे थे। सखुए के पत्ते में 'मेरा' रखा गया था, पाहान् ने हाड़िया उड़ेला। हरे–भरे बीड़ा के तीन गुच्छों पर पाहान् ने पानी छिड़का। ''रोपा की उद्घाटन विधि सोल्लास खत्म हो गयी तो लोगों के चेहरे में खुशी की लहर दौड़ गयी।''[9] रोपा करते समय गांव में उत्साह का, उल्लास का वातावरण होता है, साथ ही साथ गीतों की बाहर होती है। जब तब रिमझिम बारिश होने लगती है युवतियां गूंगूं लेने दौड़ पड़ती है, युवकों में भी अजीब सी मस्ती होती है। आदिवासी समाज श्रमजीवी समाज है, वह श्रम में भी उत्सव ढूंढ ही लेता है।

धान कटाई समाप्त हो जाने के बाद कंड़सा नृत्य का आयोजन होता है। ''युवतियां कंड़सा नृत्य के लिए धान की बालियों से घड़े को नई नवेली दुल्हन की तरह सजा कर लायी है।''[10] पहाड़ी में जतरा का आयोजन भी सबके उत्साह से किया जाता है। युवक–युवतियां उमंग से थिरक रही हैं। ढोल मांदर, नगाड़े के ध्वनि से पहाड़ी गुंजित है। ''पहान ने इशारा किया तो सब कोई जतरा टांड की ओर चल पड़े। पहान को युवकों ने लकड़ी के घोड़े में बिठा दिया, फिर उसे ढोकर चलने लगे।''[11] जतरा टांड देवता की पूजा के साथ विधिवत जतरा का उद्घाटन होता है। इसके बाद बेहिसाब नाच गानों का सिलसिला चलता है। आदिवासी समुदाय में अभिवादन और मेहमानों के स्वागत के लिए अपने एक अलग परंपरा है। अभिवादन के लिए 'जोहार' शब्द का प्रयोग होता है, कई क्षेत्रों में अपने थोड़े परिवर्तन के साथ जैसे जोहार, जोवार, जुहार आदि शब्दों से होता है। ''नये सदस्य अदब के साथ सबको जोहार कर बैठ जाते थे।"[12] करमा, गुंदरा, फगुआ के आने पर पहले उन्हें बैठाया गया, फिर पैरों में तेल मलकर पैर धोने की रस्म अदा की गई थी।

उपन्यास में धुमकुड़िया और पेल्लो एडपा का विस्तार पूर्वक वर्णन मिलता है, जिसे गीतिओडा, और युवागृह तथा घोटूल आदि नामों से भी जाना जाता है। आदिवासियों के प्रति पूर्वाग्रह तथा उस समाज की संस्कृति की सही जानकारी नहीं होने पर तथाकथित सभ्य समाज ने धुमकुड़िया को यौन स्वच्छंदता का केंद्र भर माना है। धुमकुड़िया आदिवासी समाज की संस्कृति का केंद्र है, जहां आदिवासी युवक–युवतियां लोकतंत्र के सही मायने से रूबरू होते हैं। 'धूमकुरिया में पुराने तथा नए दोनों सदस्य होते हैं।' एतवा बीड़ी बनाने में जुट गया। अभी वह नया–नया ही धुमकुड़िया का सदस्य बना था। ''पूना जोखेर को बड़ों से आज्ञा मिलते ही काम पुरा करना होता था, नही तो सजा जो मिल जाती है।''[13] पूना जोखेर अर्थात् नया जवान और कोंहा जोखेर का अर्थ हुआ उच्च स्तर का जवान। पेल्लो एडपा युवतियों का युवा ग्रह होता है।

धुमकुड़िया का रखरखाव की जिम्मेदारी युवक–युवतियों के हाथों ही होती है। ''धुंधली पीली रोशनी में दीवारों में बनाई चित्रकारी जब तब चमक उठती है।"[14] धुमकुड़िया में अविवाहित युवाओं का ही प्रवेश होता है। 'विवाह की रस्म के साथ ही फगुआ को धुमकुड़िया से भावभीनी विदाई दी गई।.... पर वह गांव का नियम था। शादी के बाद धुमकुड़िया या पेल्लो एडपा से रुखसत लेनी ही पड़ती थी।'[15] धुमकुड़िया में सांस्कृतिक, व्यवहारिक ज्ञान के साथ ही कभी–कभी मनोरंजन के लिए बुझावल का खेल भी खेला जाता है। जो बुझावल का उत्तर नहीं दे पाता उसे एक गांव या एक इलाका देना होता है। यह गांव देने के बात बस मनोरंजन के लिए ही होती है। जितनी के गलत उत्तर पर सनिचरवा उसे कहता है "क्या ढेला मार रही है सीधे से गांव क्यों नहीं दे देती हो।"[16]

आदिवासी समाज में मुख्यधारा के समाज से अधिक खुलापन है। स्त्री–पुरुष को लगभग समान अधिकार प्राप्त हैं। कह सकते हैं कि मुख्यधारा के समाज की स्त्रियों की तुलना में आदिवासी स्त्रियों की स्थिति समाज में अच्छी है। स्त्री–पुरुष दोनों को अपना जीवनसाथी चुनने का अधिकार है। झरियो जो कि एक विधवा है, फगवा से प्रेम करती है गर्भवती हो जाने तथा के कारण ढुकू घुसने झरियो और फगुआ पर पहड़ा पंचायत जुर्माना लगाता है और दोनों को शादी को मंजूरी मिल जाती है। ''फगुआ झरियो के विवाह से गांव का हर जन खुश था। पूरे गांव

ने उत्सव में हाथ बटाया। एक उजड़ा सा घर फिर से बस रहा था।"[17]

आदिवासी समाज के खुलेपन को संभ्रांत वर्ग ने यौन स्वच्छंदता से जोड़ा है, जो कि मिथ्या है। नाच के दौरान गूंदरा द्वारा परबती का हाथ थामने और जुड़े की बिरीयो और फूलों से सजाने की कोशिश करने पर उसे समाज द्वारा दंड देने की बात कही जाती है। ''जुर्माना भरो, माफी मांगो, नहीं तो नंगी पीठ में एक कोढ़ी डंडा खाओ!''[18] समाज में यौन स्वच्छंदता होती तो इस तरह के जुर्माने की बात नहीं कही जाती।

निष्कर्ष

'जंगल के गीत' उपन्यास को उरांव आदिवासी समाज को एक संपूर्ण संस्कृतिक दस्तावेज कहा जा सकता है। लेखक समाज के सांस्कृतिक पहलुओं को पारखी नजरों से देखा है उन्होंने सूक्ष्म से सूक्ष्म पहलुओं को छुआ है। उपन्यास में युवतियों के पैरों में गोदना का जिक्र, फागू सेंद्रा, बिशु शिकार, करम महोत्सव में जावा का वर्णन, हाट बाजार का वर्णन हुआ है। लेखक ने आदिवासी जीवन संस्कृति से जुड़े सभी पहलुओं पर बखूबी उद्घाटित किया है।

संदर्भ सूची

1. *आदिवासी अस्मिता की पड़ताल करते साक्षात्कार,* सं– रमणिका गुप्ता, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2012 पृष्ठ संख्या– 65।
2. दूबे, संजीव, *पांव तले की,* वाग्देवी प्रकाशन बीकानेर, प्रथम पॉकेट बुक संस्करण 2005 ई, पुनः मुद्रण संस्करण 2009, 2013, 2016 ई पृष्ठ संख्या– 14।
3. पौल फादर पीटर, एक्का एस. जे., *जंगल के गीत,* सत्य भारती प्रकाशन, डॉक्टर कामिल बुल्के पथ रांची, 1990 पृष्ठ संख्या–87।
4. हेराल्ड एस तोपनो, *उपनिवेशवाद और आदिवासी संघर्ष,* सं–अश्वनी कुमार पंकज, विकल्प प्रकाशन नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ संख्या –129।
5. पौल फादर पीटर, एक्का एस. जे., *जंगल के गीत,* सत्य भारती प्रकाशन, डॉक्टर कामिल बुल्के पथ रांची, पृष्ठ संख्या –97।
6. वही, पृष्ठ संख्या 126।
7. वही ,पृष्ठ संख्या 127।
8. *आदिवासी अस्मिता की पड़ताल करते साक्षात्कार,* सं–रमणिका गुप्ता, स्वराज प्रकाशन नई दिल्ली, प्रथम संस्करण –2012 ,पृष्ठ संख्या– 40।
9. पौल फादर पीटर, एक्का एस. जे., *जंगल के गीत,* सत्य भारती प्रकाशन, डॉक्टर कामिल बुल्के पथ रांची, पृष्ठ संख्या–167।
10. वही, पृष्ठ संख्या –140।
11. वही, पृष्ठ संख्या– 142।
12. वही, पृष्ठ संख्या– 111।
13. वही, पृष्ठ संख्या –111।
14. वही, पृष्ठ संख्या –122।
15. वही, पृष्ठ संख्या –136।
16. वही, पृष्ठ संख्या –115।
17. वही, पृष्ठ संख्या– 136।
18. वही, पृष्ठ संख्या –144।

****